IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास एक अवलोकन

Dr. SINA.A.R
Assistant Professor
Department of Hindi
M.E.S Ponnani College,Malappuram

उपन्यास के संबंध में कहा जा सकता है कि वह जीवन की व्यापकता को यथार्थ रूप में चित्रित करता है। इसमें कथावस्तु, पात्र, चरित्र चित्रण, एवं संवाद के माध्यम से जीवन के यथार्थ को कल्पना का पुट मिलाकर प्रस्तुत करने का प्रयास है। कथानक के श्रृंखला बद्ध होने से उपन्यास आकार में बडा बन जाता है। गद्य साहित्य के प्रायः सभी अंगों का विकास 19वीं शती के अंत में ही हुआ। अंग्रेज़ों का राज्य लगभग 150 वर्षों तक भारत में रहा। उनका संपर्क जनता से बढता गया। अंग्रेज़ों का यह निकटतम संबंध भी उपन्यास साहित्य के विकास केलिए सहायक सिद्ध हुआ। डॉ. सभापति मिश्र के शब्दों में "हिन्दी में उपन्यास साहित्य का आविर्भाव 19वीं शति के अंतिम चरण में हुआ, जिन भाषा - भाषियों का अंग्रेज़ी से अधिक संपर्क था, उनमें उपन्यासों का प्रचार पहले हुआ। उपन्यासों की रचना हिन्दी के पूर्व बंगला में होने का यही कारण है।"[20] हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में अनेक रूपगत वैविध्य देखने को मिलता है। लगभग सन् 1800ई. के आस - पास हिन्दी साहित्य क्षेत्र में औपन्यासिक विधा का केवल नमूना मात्र देखने को मिलता है। 1850 के आस - पास आते ही अंग्रेज़ी ढंग का मौलिक उपन्यास आने लगा। वर्तमान युग में चरमोत्कर्ष में पहूँचनेवाले हिन्दी उपन्यास के विकास के इस लंबे अर्से को मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है- पूर्व प्रेमचन्द युग और प्रेमचन्दोत्तर युग।

हिन्दी उपन्यास साहित्य सामान्यतः 150 वर्ष पुराना माना जाता है। भारतेन्दु से शुरुआत करने वाले हिन्दी उपन्यास को प्रेमचन्द के पदार्पण से एक नवीन दिशा प्राप्त हुई। प्रेमचन्द की देन को मदुदे नज़र रखते हुए स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी उपन्यास को इस प्रकार बाँटा जा सकता है - पूर्व प्रेमचन्द युग और प्रेमचन्द युग।

वास्तव में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने ही आधुनिक हिन्दी उपन्यास के बीज बोये थे। लेकिन समकालीन राजनैतिक विभीषिका और घटना संकुलता के इस युग में इस बीज को अंकुरित, पल्लवित और विकसित होने का मौका नहीं मिला। भारतेन्दु हिन्दी साहित्यिक जगत का ध्यान 'उपन्यास' नाम की इस नवीन साहित्यिक विधा की ओर आकृष्ट कर देने में सफल हुए। भारतेन्दु जी की अनेक कृतियाँ उपन्यास की तालिका में रखी जा सकती हैं। पर उन में से एक भी मौलिक रचना नहीं है। उपन्यास कला की दृष्टि से

भारतेन्दु जी की सबसे महत्वपूर्ण कृति 'पूर्णप्रकाश' और 'चन्द्रप्रभा' है, लेकिन खेद की बात है कि उनकी यह कृति भी मराठी से अनुदित है। यदि कहीं यह कृति उनकी स्वयम् की मौलिक रचना होती तो उन्हें निस्संकोच हिन्दी उपन्यास का जनक स्वीकारा जाता। तथपि यह सत्य है कि भारतेन्दु जी ने साहित्य की नवीन औपन्यासिक विधा की ओर अपने सम सामयिकों का ध्यान आकर्षित किया, जिस के परिणाम स्वरूप हिन्दी में अनेक औपन्यासिक रचनाओं का प्रणयन हुआ।

हिन्दी के सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास की बात को लेकर विद्वानों में मत भेद है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से श्री श्रद्धाराम फुल्लौरी का लिखा हुआ 'भाग्यवति' (सन् 1877) शीर्षक उपन्यास हिन्दी का सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास माना जा सकता है। यह अग्रेज़ी नॉवेल के अधिक समीप है फिर भी समस्त विशेषताओं को पूर्ण रूप से प्रकट करने में समर्थ नहीं है। महेन्द्र चतुर्वेदी का कथन है - ''ऐतिहासिक दृष्टि से 'भाग्यवती' प्रथम उपन्यास होते हुए भी श्री श्रद्धाराम फुल्लौरी के स्थान पर लाला श्रीनिवास दास को ही हिन्दी उपन्यास का जनक कहलाने का अधिकार है।''[21]

नैतिक उपन्यासकारों का श्रेय श्री बालकृष्ण भटट को मिलता है। उनके उपन्यास है - 'रहस्यात्मकता', 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान एक सुजान' आदि। भट्ट के उपन्यासों के संबंद्ध में डॉ. बच्चन कहते हैं - ''इनमें उपन्यासकला की विशेषतायें तो नहीं मिलती, किन्तु शिक्षाओं से भरे है ..... पात्रों का चरित्र चित्रण भी अच्छा हुआ है कहा जाता है उनके पात्र वैसे ही है जैसे उन्होंने वास्तविक जीवन में पाये थे।''[22]

इन उद्भव युगीन हिन्दी उपन्यास की अगली श्रृंखला श्री जगमोहन सिंह के 'श्यामा - स्वप्न' नामक प्रेम भावना प्रधान उपन्यास से प्रारंभ होती है। इसके पश्चात हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में देवकी नंदन खत्री अपनी मौलिक प्रतिभा एवं तिलस्मी और ऐयारी का सामान लेकर अवतरित हुए। 1857ई. में देवकी ंदन खत्री ने प्रयोग की तौर पर चंद्रकांता का पहला हिस्सा लिखा था। 1891 में चंद्रकांता के चार हिस्सों का प्रकाशन हुआ था। चंद्रकांता का प्रकाशन हिंदी उपन्यास के इतिहास में एक ऐसी घटना है जिसना उपन्यास के स्वरूप में अभूतपूर्व परिवर्तन ला दिया। मानो एक पहाडीनदी मैदान में उतर आयी हो इसके पूर्व लगभग बीस वर्षों में केवल एक दर्जन कमोवेश उपन्यास कहलाने योग्य मौलिक कथापुस्तकें लिखी गयी थी।[22] उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'चन्द्रकांता' ने हिन्दी पाठकों की संख्या में आश्चर्य जनक बृद्धि की। इनकी अन्य प्रमुख रचनायें 'चन्द्रकान्ता संतती', 'भूतनाथ', 'नरेन्द्र मोहिनी', 'कुसुम कुमारी' आदि है। उपन्यास कला की दृष्टि स चन्द्रकान्ता हिन्दी का प्रथम साहित्यिक उपन्यास है।

हरिनारायण टंडन का जासूसी उपन्यास 'चाचा के खून' भी चन्द्रकान्ता की परंपरा को आगे बढाने में सहायक हुआ। राधाकृष्ण दास रचति 'निस्सहाय हिन्दू' नामक समस्या प्रधान उपन्यास भी विशेष उल्लेखनीय है। इसी परंपरा के अन्य उपन्यासकारों में गोकुलानंद प्रसाद, रत्नचन्द्रप्लीडर, चुन्नीलाल खत्री, विट्ठलदास आदि प्रमुख है।

प्रेमचन्द पूर्व प्रतिनिधि उपन्यासकारों के संबंध में विचार किया जाय तो सबसे पहले आनेवाला नाम श्री किशारीलाल गोस्वामीजी का है। डॉ. वार्ष्णेय की मान्यता है। ''किशोरीलाल गोस्वामी को पूर्व प्रेमचन्द युग का प्रतिनिधि उपन्यासकार माना जा सकता है। उपन्यास लेखक श्री गोस्वामी जी का साहित्य में वही स्थान है जो नाटककारों में भारतेन्दु जी का।''[23] इनके उपन्यासों में समाज के कुछ सजीव चित्र, वासनाओं के रूप रंग, चित्ताकर्षक वर्णन और थोडा बहुत चरित्र-चित्रण भी दृष्टिगत होता है।

जासूसी उपन्यास की उपधारा में आनेवाले उपन्यासकारों में श्री गोपालराम गहमरी सर्वोपरि है। गहमरी जी के उपन्यासों में घटनाओं के कुशल संयोजन एवं सुधारवादी दृष्टिकोण विशेष रूप से दिखाई पडते है। उनके उल्लेखनीय जासूसी उपन्यास हैं - 'चतुर चंचला', 'भानुमती', 'नेमा गुप्तचर', 'घरका भेदी', 'डाक्टर की कहानी', 'जमुना का खून', 'जासूस की भूल' आदि। जासूसी उपन्यासों के अतिरिक्त उन्होंने सामाजिक उपन्यासों की रचना भी की। उनका सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास है 'नये बाबू'। 'बडा भाई', 'देवरानी जेठानी', 'दो बहिनें' आदि भी उल्लेखनीय है। गोस्वामी के पश्चात आने वाले मेहता लज्जा राम शर्मा की देन भी कुछ कम दिखाई नहीं पडती।

'प्रेमचन्द के पूर्व का युग उपन्यास रूपी बालक के दुधमुखी प्रयास काल माना जा सकता है। प्रेमचन्द के पूर्व के उपन्यासों में दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ प्रमुख थीं - उपदेशात्मक उपन्यास और मनोरंजन प्रधान उपन्यास। उपदेश प्रधान उपन्यास आचार, धर्म, नीति और समाज सुधार केलिए लिखे गये थे। सामाजिक एवं ऐतिहासिक प्रवृत्ति के साथ - साथ तिलस्मी एवं जासूसी उपन्यासों का भी विकास हुआ। इन उपन्यासों का एकमात्र लक्ष्य मनोरंजन था। सभी उपन्यासों का कथानक राजा रानी एवं उनके महलों तक ही सीमित रहा। इन उपन्यासों में कथानक की ही प्रधानता रही। पात्रों के चरित्र एवं मानसिक द्वन्द्वों का चित्रण करने में ये हमेशा असफल रहे।

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिपरक इतिहास - डॉ. सभापति मिश्रा पृ: 333
2. हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण - महेन्द्र चतुर्वेदी पृ: 27
3. आधुनिक हिन्दी उपन्यास : उत्भव और विकास - डॉ. बेचन पृ: 55
4. हिंदी उपन्यास का इतिहास- गोपाल राय पृ 71
5. आधुनिक हिन्दी साहित्य - डॉ. वार्ष्णेय पृ: 179